इतिहास आज भी जीवित है

डॉ. प्रीति जोशी

आज आधुनिक खेती के ज़माने में जब हम पारम्परिक खेती या सजीव खेती की बात करते हैं जो पूरी तरह रसायन-मुक्त हुआ करती थी और हमारी आत्मनिर्भर कृषि संस्कृति का आधार थी, तब लोग उसे पुराने ज़माने की बात कहते हैं। अक्सर कहा जाता है कि पहले बिना रसायन की खेती हो सकती थी परन्तु आज यह सम्भव नहीं है। आज का पर्यावरण, आज की ज़मीन बिना किसी बाहरी मदद के अच्छा उत्पादन देने में सक्षम नहीं है।

परंतु आज भी हमारे देश में कई जगह कृषि की वही पुरानी आत्मनिर्भर खेती की परम्परा जीवित है जहां किसी भी प्रकार की बाहरी सहायता के बिना किसान अच्छी खेती कर रहे हैं। वे इससे अपना व अपने परिवार का भरण पोषण कर रहे हैं और सुखी व संतुष्ट हैं। ऐसा ही एक क्षेत्र है छत्तीसगढ़ के बस्तर ज़िले का जहां 70 प्रतिशत जनसंख्या आदिवासी है। ये पूरी तरह से कृषि एवं वनों पर निर्भर हैं। प्रस्तुत है इसी क्षेत्र के एक किसान की कहानी:

किसान का नाम : राजूराम नेताम
गांव : चिचपोंलग
पता : पोस्ट: बमनी,
पंचायत: सम्बलपुर,
तहसील: कोण्डागांव

धन धान से भरपूर राजूराम नेताम

कोण्डागांव रायपुर से करीब 230 किलोमीटर की दूरी पर है और चिचपोंलग कोण्डागांव से पांच किलोमीटर की दूरी पर है। राजूराम नेताम परम्परागत किसान हैं। इनके पास बारह एकड़ ज़मीन है। वे मुख्यत: धान की सूखी खेती करते हैं। ये लकड़ी के अच्छे कारीगर भी हैं, साथ ही एक अच्छे वैद्य भी। जड़ी-बूटियों का इन्हें अच्छा ज्ञान है। दूर-दूर के गांवों से लोग इनके पास इलाज करवाने आते हैं। हड्डी जोड़ने के काम में ये खास तौर पर माहिर हैं।

खेती के विषय में बातचीत करने पर उन्होंने बताया कि वे पुरखों से धान की ही खेती करते आ रहे हैं। पानी की सुविधा न होने से दूसरी कोई फसल नहीं ले पाते हैं। राजू भाई अपने पुरखों से संभाले हुए देशी बीजों का ही प्रयोग करते हैं। इनके पास मुख्यत: तीन प्रकार के धान के बीज हैं जिनकी वे हर वर्ष खेती करते हैं। ये हैं आसनचूड़ी, सपरी और लुचई।

आसनचूड़ी की एक एकड़ में 7-8 क्विंटल उपज होती है। यह सफेद चावल है जिसका स्वाद काफी अच्छा है। इस क्षेत्र में अधिकांशत: यही खाया जाता है।

सपरी भी सफेद चावल है परंतु आसनचूड़ी से थोड़ा मोटा। इसकी भी उपज 7-8 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

लुचई बासा भोग की तरह छोटा चावल है परंतु इसमें खुशबू नहीं होती। इसकी उपज भी तकरीबन 9 क्विंटल प्रति एकड़ होती है।

खेती में कोई विशेष खर्चा नहीं होता - बीज अपने हैं, बैल अपने हैं। सिर्फ एक बार निंदाई करनी पड़ती है। मज़दूरों को, विशेषत: महिलाओं को मज़दूरी के बतौर पिछले वर्ष का बचा 3 किलो धान दिया जाता है। खेती में गोबर खाद का प्रयोग किया जाता है। पहले वर्ष एक एकड़ में 6 बैलगाड़ी खाद डालते हैं। दूसरे और

तीसरे वर्ष 3 बैलगाड़ी और चौथे वर्ष पुनः 6 बैलगाड़ी खाद डाली जाती है। एक जोड़ी बैल व 2 गाय का गोबर तथा वर्ष भर का कचरा एक गड्ढे में एकत्र कर वे अपनी खेती के लिए पर्याप्त खाद बना लेते हैं।

किसान बारी-बारी से मिलकर एक-दूसरे के खेत में धान की कटाई करते हैं। इससे मज़दूरी का खर्चा नहीं होता। धान के अलावा वे अपनी बाड़िओं में उड़द लगाते हैं जो कुल करीब एक क्विंटल होती है। थोड़ी बहुत सब्ज़ियां बारिश में लगाई जाती हैं। खेती से उनकी साल भर की अनाज की ज़रूरत पूरी हो जाती है। धान को बाज़ार में बेचने की बजाए घर के उपयोग के लिए रखा जाता है। गांव में किसी के भी यहां शादी वगैरह होने से स्वेच्छा से धान दिया जाता है। सूखा के वर्षों में धान की फसल काफी कम (लगभग आधी) होने पर भी पिछले वर्ष का संग्रहित धान वर्ष भर अनाज की कमी नहीं होने देता। ये पांच वर्ष तक का धान संग्रहित रखते हैं। अतः किसी वर्ष कम और किसी वर्ष ज़्यादा होने के कारण संतुलन बना रहता है। पांच वर्ष बाद ज़रूरत से पांच-छह क्विंटल ज़्यादा होने पर ही धान बेचा जाता है।

आय के मुख्य साधन वनोपज हैं। गर्मी के मौसम में ये वन से महुआ, टोरा, साल बीज, इमली, तेंदुपत्ता, कंद, जामुन, आंवला, आम, भेलवा, फल आदि एकत्र करके बेचते हैं। इससे इन्हें प्रतिवर्ष अनुमानतः 1500-2000 रुपए की आमदनी हो जाती है। इसके अलावा अतिरिक्त समय में वे लकड़ी की कारीगरी करते हैं जिससे वर्ष के 3000-4000 रुपए मिल जाते हैं। साथ ही बकरियां, मुर्गियां भी पालते हैं जो इनका बचत बैंक हैं। अधिक पैसे की ज़रूरत पड़ने पर 6000-7000 रुपए जानवर बेचकर कमाए जा सकते हैं।

राजू भाई को मुर्गी लड़वाने का भी बड़ा शौक है। ये मुर्गी को लड़ने के लिए तैयार करते हैं और बाज़ार में लड़वाते हैं। जीतने पर हारा हुआ मुर्गा व शर्त के पैसे इनके हिस्से आते हैं।

इनका पारिवारिक खर्च बहुत कम है। मुख्यतः मिर्च एवं साबुन ही बाज़ार से खरीदते हैं। इस पर महीने में 50 रुपए खर्च आता है। अर्थात वर्ष भर का कम से कम 600 रुपए और अधिकतम 1000 रुपए का खर्च होता है। यदि बच्चे पढ़ते हैं तो शिक्षण की फीस पर तो नहीं, परंतु कपड़ों, किताबों आदि पर 1100-1200 रुपए प्रति बच्चा प्रतिवर्ष खर्च आता है। ये एक या दो बच्चों को ही ज़्यादा से ज़्यादा पांचवीं तक पढ़ाते हैं। उनके अनुसार इससे अधिक पढ़ाई की ज़रूरत नहीं है, नहीं तो लड़का गांव से बाहर शहर में जाकर नौकर बनेगा। उनका मानना है कि अच्छे से खेती करें तो वर्ष भर की नौकरी से कहीं ज़्यादा खेती से कमा सकते हैं।

वे अच्छे वैद्य हैं और जड़ी -बूटियों से इलाज करते हैं। जंगल में खोजने की बजाए वे जड़ी - बूटियों को बाड़ी में लगाना क्यों नहीं पसंद करते पूछने पर उन्होंने कहा कि इससे उनका भेद खुल जाएगा। सभी को पता चल जाएगा कि कौन सी दवा किस बीमारी में काम आती है। वे अपना ज्ञान सिर्फ अपने बेटे को देते हैं। जब हमने उनसे औषधीय पौधों की खेती करने के लिए कहा ताकि उसे बेचकर उन्हें आमदनी हो सके, तब उन्होंने कहा कि जड़ी - बूटी बेचना उनके सिद्धांत के खिलाफ है।

वे अच्छे वैद्य हैं और जड़ी-बूटियों से इलाज करते हैं। जंगल में खोजने की बजाए वे जड़ी-बूटियों को बाड़ी में लगाना क्यों नहीं पसंद करते पूछने पर उन्होंने कहा कि इससे उनका भेद खुल जाएगा। सभी को पता चल जाएगा कि कौन सी दवा किस बीमारी में काम आती है। वे अपना ज्ञान सिर्फ अपने बेटे को देते हैं। जब हमने उनसे औषधीय पौधों की खेती करने के लिए कहा ताकि उसे बेचकर उन्हें आमदनी हो सके, तब उन्होंने कहा कि जड़ी-बूटी बेचना उनके सिद्धांत के खिलाफ है। जड़ी इलाज करने के लिए है, बेचने के लिए नहीं।

राजू भाई ने अपने खेत में एक तालाब भी बनवाया है जिसमें वॉटर शेड की योजना के अलावा करीबन 9000 रुपए खर्च किए हैं। इससे उनकी खेती को तो लाभ होगा ही, वे दो फसलें लेने के साथ-साथ मछली भी पाल सकेंगे। उनका मानना है कि मछली पालने से

वर्ष में 12000 रुपए तक की आमदनी हो सकती है, जो अतिरिक्त होगी।

इस तरह राजू भाई एक समृद्ध, संतुष्ट किसान हैं जिन्हें गांव में किसी प्रकार की कमी नहीं है। गांव की समस्याओं के बारे में उन्होंने कहा कि गांव में पानी आदि की कोई समस्या नहीं है, सिर्फ डॉक्टर नहीं है। यदि डॉक्टर होगा तो गांव में लोग अज्ञात बीमारियों से मरेंगे नहीं। उनका सही वक्त पर इलाज हो पाएगा। यदि डॉक्टर की व्यवस्था न हो तब भी कम से कम ड्राइवर समेत एक गाड़ी तो होना ही चाहिए ताकि बीमार को वक्त पर अस्पताल पहुंचाया जा सके। दूसरी समस्या गांव में अच्छे शिक्षक की है। ऐसा शिक्षक जो बच्चों को अच्छी तरह से पढ़ा सकेगा।

जब उनसे पूछा गया कि क्या आप जंगल बचा रहे हैं। तब उन्होंने कहा कि हम तो जंगल बचाते हैं। परंतु जंगल विभाग वाले हमारे बचाए जंगल को सरकारी जंगल बताते हैं और वक्त आने पर कटवा भी देते हैं। हम तो सोच-समझकर जंगल काटते हैं। ज़रूरत होने पर ही लकड़ी लेते हैं। परंतु जंगल विभाग के लोग ठेकेदार को बुलवाकर पूरा ही जंगल काट लेते हैं।

इसी क्षेत्र में गोलावण्ड में कुछ युवाओं का एक समूह है, इसका नाम धरोहर है। इन्होंने अनाज के बीजों की देशी जातियों की विविधता को बचाए रखने का बीड़ा उठाया है। उनके पास करीबन 300 धान की जातियां हैं। इन्हें उन्होंने 50 किसानों के खेत पर लगाकर संग्रहित की हैं। उनका कहना है कि धान की अलग-अलग जातियों के ये बीज समाज की संपत्ति है और

समाज के पास सुरक्षित हैं। अतः वे ग्रामीण आदिवासियों के बीच ही रहकर उन्हें अपने बीजों की विविधता की बहुमूल्य संपदा को संभालकर रखने व बढ़ाने के लिए प्रेरित व जागरूक करते रहते हैं। 'धरोहर' को कहीं से कोई विशेष आर्थिक सहायता नहीं मिलती। ये स्वप्रेरणा से पूर्ण लगन एवं मेहनत के साथ पिछले 4-5 वर्षों से इस काम में जुड़े हुए हैं।

इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि आज भी ऐसे लोग हैं जिन्होंने प्रकृति की सम्पदा को बचाकर रखा है और अपने जीवन में आत्मनिर्भर हैं। अनपढ़, मूर्ख समझे जाने वाले ये आदिवासी अपनी जैव विविधता को बचाने का महत्वपूर्ण काम कर रहे हैं और हम शहर के प्रगतिशील लोग अपनी सम्पदा को नष्ट करने पर तुले हैं; काफी हद तक नष्ट कर भी चुके हैं। इन आदिवासियों को अपना गुरू मानकर हमें इनसे सजीव व स्वावलंबी खेती की कला सीखना चाहिए। *(स्रोत विशेष फीचर्स)*

स्रोत के ग्राहक बनें, बनाएं

वार्षिक सदस्यता शुल्क 150 रुपए

सदस्यता शुल्क कृपया एकलव्य, भोपाल के नाम बने ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से एकलव्य, ई-7 एच.आई.जी. 453, अरेरा कॉलोनी, भोपाल 462 016 के पते पर भेजें